हिन्दू विधि

प्र०-1 विभाजन की परिभाषा दीजिए विभाजन किस प्रकार प्रभावी होता है! क्या एक बार प्रभावी हुए विभाजन को पुनः खोला जा सकता है!

परिचय

"अविभक्त कुटुम्ब" अध्याय में यह कहा जा चुका है कि मिताक्षरा शाखा में सहदायिक में सहदायिकों का हित अविनिर्दिष्ट होता है। सम्पत्ति का बंटवारा होने के पूर्व कोई सहदायिक यह नहीं कह सकता कि अविभक्त सम्पत्ति में उसका अमुक भाग है।। अविभक्त कुटुम्ब की हैसियत का विघटन हो जाने से भी अविभक्त कुटुम्ब की सम्पत्ति पर इसका असर नहीं पड़ता और बंटवारा होने तक वह अविभक्त सम्पत्ति बनी रहती है। सहदायिकों में प्रत्येक सदस्य को बंटवारा कराने का अधिकार होता है। बंटवारे के अन्तर्गत दो बातें आती हैं-पहले हैसियत का विभाजन होता है और तत्पश्चात् माप और सीमांकन (meets and bounds) द्वारा विभाजन होता है। अविभक्त कुटुम्ब के सदस्यों के बंटवारा के लिये सहमत होते ही अविभक्त हैसियत समाप्त हो जाती है और केवल माप और सीमांकन द्वारा बंटवारा बाकी रहता है। जैसे कि हैसियत का विभाजन होता है वैसे ही सहदायिक का अंश विधि के अनुसार नियत हो जाता है। बंटवारा अविभक्त कुटुम्ब सम्पत्ति में अंशों के विभाजन मात्र द्वारा ही प्रभावी हो जाता है और यह आवश्यक नहीं है कि सम्पत्ति का माप और सीमांकन द्वारा विभाजन होना चाहिये 5 अविभक्त सम्पत्ति में सहदायिकों के अधिकारों को विनिर्दिष्ट कर देना ही बंटवारा कहा जाता है। दूसरे शब्दों में, बंटवारा का तात्पर्य अविभक्त सम्पत्ति में सहदायिकों के भाग को अवधारित कर देने से है इस सम्पत्ति का वस्तुतः बंटवारा होना आवश्यक नहीं है। सम्पत्ति में सदस्यों का भाग अवधारित हो जाने पर सम्पत्ति का वस्तुत: बंटवारा बाद में हो सकता है। अविभक्त सम्पत्ति में सदस्यों का भाग एक बार अवधारित हो जाने पर सम्पत्ति अविभक्त सम्पत्ति नहीं रह जाती है, और उसका यथार्थतः बंटवारा न होने पर

PGS National College Of Law

Disclaimer: Although all Prevention Measures are being used While making these notes but students are advise, they can consult from subject book.

हिन्दू विधि

भी सदस्य उसे सह-अभिधारी (Co-tenants) के रूप में धारण करते हैं, संयुक्त-अभिधारी (Joint tenants) के रूप में नहीं। बँटवारा की विधि का अध्ययन निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत करना समीचीन होगा–

(1) बंटवारा की जाने वाली सम्पत्ति।

(2) बंटवारा होने पर भाग प्राप्त करने के अधिकारी व्यक्ति।

(3)बंटवारा कैसे होता है?

(4) बंटवारे का ढंग ।

(5) फिर से बंटवारा।

(6) पुनरेकीकरण।

बँटवारा की जाने वाली सम्पत्ति

(Property liable to Partition)

बँटवारा उसी सम्पत्ति का होता है जो परिवार के सदस्यों द्वारा बँटवारे के पूर्व अविभक्त सम्पति के रूप में धारण की गई है। बंटवारे के समय तक सम्पत्ति का केन्द्रक या बीज अविभक्त कुटुम्ब की सम्पत्ति होने से सारी सम्पत्ति को अविभक्त कुटुम्ब की सम्पत्ति माना जायेगा परिवार के सदस्यों को पृथक् सम्पत्ति का बैंटवाग नहीं होता है।

अविभक्त सम्पत्ति के " अविभाज्य सम्पदा 9 होने पर उसका भी बैटवारा सदस्यों के बीच नहीं होता है।

PGS National College Of Law

Disclaimer: Although all Prevention Measures are being used While making these notes but students are advise, they can consult from subject book.

हिन्दू विधि

कुछ प्रकार की सम्पत्ति अपने स्वरूप के कारण अविभाजनीय मानी जाती है, जैसे पशु, यान, कुंआ, सड़क, काष्ठोकरण इत्यादि। इसके सम्बन्ध में यह नियम है कि या तो इन्हें बेचकर इनका मूल्य सहदायिकों में वितरित कर दिया जाय, अथवा इनके मूल्य का अनुमान लगाकर इन्हें किसी एक सहदायिक को उसके भाग के अंग के रूप में दिया जाय, और इन्हें न प्राप्त करने वाले सहदायिकों को इसके बदले में, इसके बराबर मूल्य की अन्य वस्तु मिले, अथवा इन वस्तुओं का उपयोग और उपभोग सहदायिकों द्वारा संयुक्त रूप से अथवा बारी-बारी से किया जाय।

देवमूर्तियाँ और पूर्जा अर्चना के स्थान परिवार के सदस्यों के बीच नहीं बैट सकते । परिवार के सदस्यों को इन्हें बारी-बारी से अपने पास रखने या पूजा अर्चना सम्पादित करने, जिसकी अवधि अविभक्त सम्पत्ति में प्रत्येक सदस्य के भाग के अनुपात में होती है, का अधिकार होता है।

निवासगृह के बंटवारा के लिये सदस्यों के आग्रह करने पर न्यायालय उसके बंटवारा के लिये भी डिक्री देगा, किन्तु वह प्रत्येक सम्भव प्रयत्न करेगा कि निवासगृह परिवार के एक या दो सदस्यों के पास ही रहे, और अन्य सदस्यों को इसके बदले में कुछ प्रतिफल प्राप्त हो जाय।

जहाँ परिवार का कर्ता बंटवारे के समय किसी सम्पत्ति के अपने पृथक होने का दावा करता है तो सबूत के अभाव में ऐसे अर्जन को अविभक्त कुटुम्ब की आय में से किया गया माना जायेगा।

बँटवारा होने पर अंश प्राप्त करने के हकदार व्यक्ति (Persons entitled to share on partition)

PGS National College Of Law

Disclaimer: Although all Prevention Measures are being used While making these notes but students are advise, they can consult from subject book.

हिन्दू विधि

अविभक्त सम्पत्ति का बंटवारा होने पर निम्नलिखित व्यक्ति उसमें अंश प्राप्त करने के हकदार हैं-

(1) पुत्र, पौत्र और प्रपौत्र-कोई व्यक्ति पिता, पितामह, और प्रपितामह के विरुद्ध बँटवारा के लिये वाद प्रस्तुत कर सकता है।9 किन्तु पितामह और प्रपितामह के विरुद्ध मध्यवर्ती पूर्वजों के मृत होने की स्थिति में ही बँटवारे के लिये वाद प्रस्तुत किया जा सकता है। बँटवारा होने पर प्रतिनिधित्व (representation) का नियम लागू होता है 20 यदि कोई पुत्र बंटवारा होने के पश्चात् उत्पन्न होता है, और बंटवारा होने के समय यदि वह गर्भ में था तो उसे बँटवारे को फिर से कराने का और अपने भाईयों के बराबर अंश प्राप्त करने का अधिकार होगा ऐसे पुत्र का अधिकार पिता के अंश प्राप्त किये रहने, अथवा न किये रहने पर आधारित नहीं है। यदि पुत्र का गर्भ में आना और उसका जन्म दोनों बंटवारा के पश्चात् होता है तो पिता द्वारा सम्पत्ति में से अपना अंश न लिये रहने की स्थिति में ही उसे बँटवारे को फिर से कराने का अधिकार है। किन्तु यदि बंटवारे में पिता ने अपना अंश प्राप्त किया है तो ऐसा पुत्र पिता के हाथ में स्थित सम्पत्ति में ही अंश प्राप्त करने का अधिकारी होगा 21 यदि पिता के जीवन-काल में वह पिता के साथ अविभक्त रहता है तो पिता के भाग को वह उत्तरजीविता द्वारा प्राप्त करेगा, और पिता की पृथक् सम्पत्ति का उत्तराधिकारी होगा, और उसमें पिता से उसके जीवनकाल में पृथक् हुये पुत्र कुछ भी नहीं प्राप्त करेंगे।

(2) पत्नी-पत्नी सहदायिक न होने के कारण बैटवारा की माँग नहीं कर सकी, किन्तु पति और पुत्री के बीच में बंटवारा होने की स्थिति में प्रत्येक पत्नी पति को या प्रत्येक पुत्र को प्राप्त होने वाले अंश के करावा ही अंश प्राप्त करती है। यदि पत्नी के पास "स्त्रीधन" सम्पत्ति है तो बैटवारे के समय उसे उतना ही प्राप्त होगा जितना "स्त्रीधन" के साथ जोड़ने पर वह पति के अंश के बराबर हो जाय। पत्नी द्वारा बंटवारे में इस प्रकार प्राप्त किया गया अंश, उसके भरण पोषण के लिये होने के कारण प्राचीन विधि में वह उसकी

PGS National College Of Law

Disclaimer: Although all Prevention Measures are being used While making these notes but students are advise, they can consult from subject book.

हिन्दू विधि

सीमित सम्पदा होती थी। हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के पारित होने के पश्चात् पत्नी के कब्जे में इस प्रकार की सम्पत्ति उसकी अनिर्बन्धित सम्पत्ति हो गई है । मद्रास में बैटवारा में नारियों को कोई अंश नहीं प्राप्त होता है।

(3) विधवा माता-पत्नी की ही भाँति विधवा माता की भी बँटवारा की माँग करने का हक नहीं है। पुत्रों में बँटवारा होने की स्थिति में वह पुत्र के बराबर अंश प्राप्त करने की अधिकारिणी है उसके पास स्त्रीधन होने की स्थिति में वह उतना ही प्राप्त करने की अधिकारिणी है जितना जोड़ने से उसका स्त्रीधन पुत्र के अंश के बराबर हो जाये।

(4) पितामही-यदि कोई व्यक्ति अपनी विधवा और पौत्रों को छोड़कर मरता है तो पौत्रों में बंटवारा होने की स्थिति में उनकी पितामही एक पौत्र का अंश पाने की अधिकारिणी है, किन्तु वह विधवा माता की भाँति ही बंटवारा की माँग करने की अधिकारिणी नहीं है। हिन्दू नारी का सम्पत्ति का अधिकार अधिनियम के अनुसार किसी व्यक्ति के विधवा तथा पौत्रों को छोड़कर मरने पर विधवा (पितामही) को पति के हित को प्राप्त करने का अधिकार मिल गया था, और परिणामस्वरूप बँटवारा करने का भी अधिकार मिला था। हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 में, माता के दायाद होने के कारण, वह मृतक की सम्पदा को पौत्रों के साथ प्राप्त करेगी, और उसे बंटवारा कराने का भी अधिकार होगा। इस स्थिति में विधवा की भाँति ही उनका भी बँटवारा में अलग से अंश प्राप्त करने का अधिकार समाप्त हो गया है।

(5) प्रपितामही-हिन्दू विधि के अनुसार प्रपितामही के बंटवारा में अंश प्राप्त करने का अधिकार नहीं है, किन्तु हिन्दू नारी का सम्पत्ति का अधिकार अधिनियम 1937 के पारित होने के पश्चात् किसी व्यक्ति के अपनी विधवा तथा प्रपौत्रों को छोड़कर मरने पर विधवा

Disclaimer: Although all Prevention Measures are being used While making these notes but students are advise, they can consult from subject book.

PGS National College Of Law

मृतक पति के हित को प्राप्त करती थी, और बंटवारा भी करा सकती थी। किन्तु अब, जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है, उक्त अधिनियम निरसित हो गया है। इसलिये उसके अन्तर्गत प्राप्त होने वाला अधिकार भी समाप्त हो गया है।

(6) पुत्री-हिन्दू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005 द्वारा पुत्री को पुत्र के ही समान सहदायिकी का सदस्य बना दिया गया है। वह जन्म से अपने स्वयं के अधिकार से उसी भांति ही सहदायिक बन गई है जैसे पुत्र होता है । इस प्रकार सहदायिकी सम्पत्ति का बँटवारा होने पर उसमें पुत्री का भी पुत्र के समान ही अंश होगा।

(7) निर्हं (disqualified) दायाद-बँटवारा होने के समय निरर्ह सहदायिक सम्पत्ति में कोई अंश नहीं प्राप्त कर सकते थे 125 किन्तु निरर्हता केवल व्यक्तिगत होती थी, और इससे निरहं व्यक्ति की सन्तानों को अधिकार किसी प्रकार भी बाधित नहीं होता था। निरर्हता की समाप्ति एक नया जन्म मानी जाती है। अब हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 ने निरर्हताओं को प्रायः समाप्त कर दिया है और केवल कुछ निरर्हतायें ही मानी गयी हैं।

नारियों के बारे में कुछ निरर्हताओं को हिन्दू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005 ने समाप्त कर दिया है।

(8) अजनबी व्यक्ति-किसी सहदायिक के अविभक्त हित का क्रेता, चाहे उसने उसका हित डिक्री के निष्पादन में विक्रय में लिया हो, अथवा सहदायिक ने स्वयं ही बेचा हो (ऐसा केवल मद्रास और बम्बई प्रान्त में हो सकता है) बँटवारा की मांग करने का अधिकारी है, और अपने द्वारा क्रय किये गये अंश को प्राप्त करता है।

बँटवारा कैसे होता है?

Disclaimer: Although all Prevention Measures are being used While making these notes but students are advise, they can consult from subject book.

PGS National College Of Law

हिन्दू विधि

(How Partition is made?)

जैसा कि पीछे कहा जा चुका है बंटवारा अविभक्त हैसियत का विच्छेद करता है। इसलिये यह किसी सदस्य की इच्छा अथवा संकल्प की बात होती है। जब तक कुटुम्ब का कोई सदस्य कुटुम्ब से अलग होने सम्बन्धी घोषणा नहीं करता है तब तक वह कुटुम्ब का सदस्य बना रहता है क्योंकि यह विधि की उपधारणा है कि हिन्दू कुटुम्ब अविभक्त होता है।29 धर्मशास्त्र एवं भाष्य सभी इस प्रश्न पर एकमत हैं कि अविभक्त कुटुम्ब के किसी सदस्य द्वारा पृथक् होने की इच्छा की अभिव्यक्ति मात्र से ही बँटवारा हो जाता है।30 प्रिवी कौंसिल ने भी अनेक वादों में यह अभिनिर्धारित किया है कि किसी अविभक्त कुटुम्ब के सदस्य द्वारा परिवार से पृथक् हो जाने की, और अपने अंश का पृथक् रूप से उपभोग करने की इच्छा की स्पष्ट और असंदिग्ध अभिव्यक्ति से ही बँटवारा हो जाता है 3 किसी सदस्य द्वारा ऐसा करते ही अविभक्त हैसियत समाप्त हो जाती है। अन्य सदस्यों की सहमति इस परिणाम को ले आने के लिये आवश्यक नहीं है।

निम्नलिखित बातें किसी सदस्य द्वारा की जाने पर उसके पृथक् होने की इच्छा की अभिव्यक्ति मानी जायेंगी, और बँटवारा हो जायेगा-

(1) पृथक होने की घोषणा (Declaration to separation) -अविभक्त कुटुम्ब के सदस्य द्वारा निश्चित और असंदिग्ध रूप से पृथक होने की इच्छा की अभिव्यक्ति बँटवारा माना जाता है। यह अभिव्यक्त रूप से, अथवा विवक्षित रूप से, अर्थात् आचरण के द्वारा हो सकती है। बँटवारा की इच्छा व्यक्त करने वाले सदस्य द्वारा अन्य सदस्यों को इस आशय का पत्र लिखना, अथवा अन्य प्रकार से सूचना देना पृथक् होने की अभिव्यक्त रूप से इच्छा मानी जायेगी।

PGS National College Of Law

Disclaimer: Although all Prevention Measures are being used While making these notes but students are advise, they can consult from subject book.

हिन्दू विधि

(2) सूचना (Notice)-एक सदस्य द्वारा अन्य सदस्यों को, अथवा कुटुम्ब के कर्ता को अपने पृथक् होने की इच्छा की सूचना देने से भी बँटवारा हो जाता है। यह बँटवारा सूचना देने की तिथि से होता है, न कि अन्य सदस्यों द्वारा उसके प्राप्त करने की तिथि से। यदि अविभक्त कुटुम्ब का कोई सदस्य पृथक होने के आशय की एकपक्षीय घोषणा करता है और बाद में उसे वापस ले लेता है तो उससे कुटुम्ब की पुरानी अविभक्त स्थिति नहीं वापस लौटेगी। जब एक बार अविभक्त कुटुम्ब का कोई सदस्य अपने पृथक होने के आशय की सूचना कुटुम्ब के अन्य सदस्यों को देता है तो विभाजन की स्थिति स्थापित हो जाती है और उसके कानूनी परिणाम घटित हो जाते हैं। उसके पश्चात् उस सूचना को वापस लेने से पुरानी स्थिति लौट नहीं सकेगी 38

(3) वाद प्रस्तुत करके (By Filling suit)- बँटवारा के लिये वाद प्रस्तुत करना वाद प्रस्तुत करने वाले सदस्य की पृथक् होने की इच्छा की स्पष्ट और असंदिग्ध अभिव्यक्ति मानी जाती है। कोई भी पुत्र अविभक्त कुटुम्ब की सम्पत्ति में अपने अंश के विभाजन तथा कब्जे के लिये वाद फाइल कर सकता है भले ही उसका पिता इसके लिये सहमति न दे और अपने भाई के साथ अविभक्त बना रहे। अविभक्त कुटुम्ब के विभाजन के लिये यह आवश्यक नहीं है कि सभी सदस्य विभाजन के लिये सहमत हों। कोई भी सदस्य बंटवारा के लिये वाद फाइल कर सकता है।39 सहदायिकों के एक ही मकान में अलग-अलग रहने तथा अलग-अलग कारबार करने से यह उपधारणा नहीं की जायेगी कि कोई इन्तजाम या समझौता हो चुका है। इसलिये किसी सहदायिक द्वारा बंटवारे का वाद फाइल किया जा सकता है

(4) करार द्वारा (By agreement)-- अविभक्त कुटुम्ब के सदस्यों के बीच मौखिक अथवा लिखित पृथक् होने के आपसी करार से भी बंटवारा हो जाता है। किन्तु बंटवारा होने के लिये यह आवश्यक है कि करार में बंटवारा की इच्छा सुस्पष्ट रूप से व्यक्त हो ।

Disclaimer: Although all Prevention Measures are being used While making these notes but students are advise, they can consult from subject book.

PGS National College Of Law

हिन्दू विधि

अविभक्त कुटुम्ब की सम्पत्ति के सहदायिकों में सौहार्द्रपूर्ण बंटवारे के प्रभावी होने के लिये यह आवश्यक नहीं है कि सारे सह-अंशधारी अपने-अपने अंशों के कब्जे में हो

(6) धर्म-परिवर्तन द्वारा (By conversion)- यदि कोई सहदायिक धर्म परिवर्तन करके अन्य धर्म, जैसे इस्लाम या ईसाई धर्म ग्रहण कर लेता है, तो वह अविभक्त कुटुम्ब से पृथक् माना जाता है। वह सदस्य जाति निरर्हता निवारण अधिनियम, 1850 के अनुसार परिवार की सम्पत्ति में अपने अधिकार से वंचित नहीं होगा 47 परिवार के एक सदस्य के धर्म परिवर्तन से अन्य सदस्य आपस में पृथक नहीं माने जायेंगे, और उनके बीच परिवार की अविभक्त हैसियत बनी रहेगी।

PGS National College Of Law

Disclaimer: Although all Prevention Measures are being used While making these notes but students are advise, they can consult from subject book.

हिन्दू विधि

प्र०-2 हिंदू विधि की प्रमुख शाखाओं की विवेचना कीजिए और उनके बीच प्रमुख भेदों को रेखांकित कीजिए!

"हिन्दू विधि की विभिन्न शाखाओं में विधि के दूरस्थ स्रोत एक ही है। जिस क्रिया प्रक्रम से यह शाखा अवतरित हुई वह इस प्रकार प्रतीत होती है जो कृतियाँ सार्वजनिक अथवा अति सामान्य रूप से मान्य हुई, बाद में उन पर भाष्य लिखे गये। भाष्यकार ने प्राचीन शास्त्रपाठीं को अपने ढंग से अर्थ दिया. और उनकी प्रामाणिकता भारत के एक भाग में स्वीकार किये जाने और दूसरे भाग में अस्वीकार किये जाने के कारण परस्पर विरोधी सिद्धान्तों वाली शाखायें उत्पन्न हुई।"

इस प्रकार हिन्दू विधि की शाखायें प्राचीन शास्त्रपाठों को भिन्न-भिन्न अर्थ देने के कारण अस्तित्व में आई। प्राचीन शास्त्रपाठों को भिन्न-भिन्न अर्थ अपनी-अपनी स्थानीय रूढ़ियों एवं प्रथाओं के आधार पर दिया गया। इतने विशाल देश में यह स्वाभाविक ही था कि भिन्न-भिन्न भागों में भिन्न-भिन्न प्रकार की रूढ़ियाँ तथा प्रथायें प्रचलित हों। इसके साथ ही यह भी आवश्यक था कि विधि को विकासशील रखने के लिये उसे इस प्रकार का अर्थ दिया जाये कि प्रचलित एवं मान्य रूढ़ियों तथा प्रथाओं को उसमें स्थान मिले। विधि को इस प्रकार का अर्थ देने वाली कृति की उस भूभाग में सर्वोपरि मान्यता होनी स्वाभाविक बात थी। इस प्रकार हिन्दू विधि की शाखायें परस्पर किसी मौलिक अथवा आन्तरिक सैद्धान्तिक अन्तर पर नहीं आधारित हैं, बल्कि ये एक विकासशील विधि के स्थानीय रूपान्तरण की आवश्यकता की देन हैं हिन्दू विधि की निम्नलिखित शाखायें हैं-

(1) बनारस शाखा (Banaras School)—इस शाखा को मिताक्षरा शाखा भी कहा जाता है, क्योंकि विज्ञानेश्वर द्वारा लिखित मिताक्षरा इस शाखा का सर्वोपरि मान्य ग्रन्थ है।

PGS National College Of Law

Disclaimer: Although all Prevention Measures are being used While making these notes but students are advise, they can consult from subject book.

हिन्दू विधि

तथापि मिताक्षरा के कुछ सीमा तक अन्य शाखाओं में भी मान्य होने के कारण इस शाखा का बनारस नाम अधिक वांछनीय है। इस शाखा के अन्तर्गत समस्त उत्तर प्रदेश, दक्षिण बिहार, उड़ीसा का अधिक अंश तथा मध्य प्रदेश का कुछ भाग आता है। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, इस शाखा की सर्वोपरि प्रामाणिक पुस्तक मिताक्षरा है। मिताक्षरा के अतिरिक्त 'वीर मित्रोदय' भी इस शाखा का प्रामाणिक ग्रन्थ है। वीर मित्रोदय, वस्तुत: मिताक्षरा का अति निकटता से अनुसरण करता है और उसमें दी गई बातों की व्याख्या करके और उसमें की कमियों को पूरा करके यह उसके एक अनुपूरक के रूप में है।

(2) मिथिला शाखा (Mithila School) -इस शाखा के सीमाक्षेत्र में उत्तर बिहार और तिरहुत आता है। इस शाखा के प्रामाणिक भाष्य "विवादचिन्तामणि" और 'विवाद रत्नाकर' हैं। यह भाष्य, वस्तुतः मिताक्षरा' के विरोध में नहीं हैं, बल्कि इन्होंने एक प्रकार से 'मिताक्षरा' को ही स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप बनाया है। इन दो भाष्यों से जहाँ मिताक्षरा का विरोध नहीं है। वहाँ मिताक्षरा भी इस शाखा का प्रामाणिक ग्रन्थ है। प्रिवी कौंसिल ने एक वाद में कहा था कि "कुछ थोड़ी सी बातों को छोड़कर जहाँ मिथिला शाखा की विधि 'मिताक्षरा' की विधि से भिन्न है, मिथिला शाखा की विधि मिताक्षरा की विधि ही है।3

(3) महाराष्ट्र अथवा बाबई शाखा-(Maharashtra or Bombay School स शाखा को मयूख शाखा' भी कहा जाता है क्योंकि 'व्यवहार मयूख' इस शाखा का प्रामाणिक ग्रन्थ है। इस शाखा के अन्तर्गत महाराष्ट्र, सौराष्ट्र, मध्य प्रदेश का कुछ भाग और आन्ध प्रदेश का कुछ भाग आता है इस शाखा में नीलकंठ लिखित "व्यवहार मयूख" प्रामाणिक ग्रन्थ है। तथापि बनारस शाखा की भाँति ही इस शाखा में भी 'मिताक्षरा' कुछ भागों में सर्वोपरि प्रामाणिकता रखता है। गुजरात, बम्बई द्वीप, उत्तर कॉकण और बरार क्षेत्र में 'मयूख' तथा मिताक्षरा में मतभेद होने की स्थिति में मयूख' में दी गई व्याख्या मानी जाती है न कि 'मिताक्षरा' में। पूना, खानदेश और अहमदनगर क्षेत्र में मयूख को मिताक्षरा के समान ही प्रामाणिकता

Disclaimer: Although all Prevention Measures are being used While making these notes but students are advise, they can consult from subject book.

PGS National College Of Law

प्राप्त है। वहां 'मयूख 'मिताक्षरा' में दी गई व्याख्या को निरसित नहीं कर सकता। इन क्षेत्रों में मिताक्षरा' सर्वोपरि माना जाता है। न्यायालयों ने अनेक वादों में इन दोनों कृतियों में सामंजस्य स्थापित करने का, और इस प्रकार किसी की उपेक्षा न करने का प्रयत्न किया है।

(4) मद्रास अथवा द्राविड़ शाखा (Madras or Dravidian School)-इस शाखा के अन्तर्गत मद्रास प्रान्त, केरल प्रान्त, मैसूर प्रान्त इत्यादि आते हैं। इस शाखा के प्रामाणिक ग्रन्थ देवानन्द भट्ट रचित 'स्मृतिचन्द्रिका' और माधवाचार्य रचित 'पाराशरमाधवीय' हैं। प्रताप रुद्रदेव का 'सरस्वती विलास भी कुछ सीमा तक प्रामाणिक माना जाता है। मिताक्षरा' यहाँ भी अपनी कुछ प्रामाणिकता रखता है यदि इस शाखा के उपर्युक्त प्रामाणिक ग्रन्थ किसी बात में समान मत प्रकट करते हैं तो वे उस बात पर मिताक्षरा के मत के ऊपर माने जाते हैं। किन्तु उनमें परस्पर मतभेद होता है तो मिताक्षरा का मत ही प्रामाणिक माना जाता है।

(5) पंजाब शाखा (Punjab School)-इस शाखा के अन्तर्गत पंजाब प्रान्त, राजस्थान, और जम्मू तथा काश्मीर आते हैं। वस्तुत: इस शाखा में रूढ़ियों का प्राधान्य है। किसी बात के सम्बन्ध में किसी रूढ़ि के होने पर उसे ही मान्यता मिलती है। ऐसा न होने पर जम्मू तथा काश्मीर प्रान्त में अपरार्क लिखित ' याज्ञवल्क्य स्मृति' के भाष्य को और बाकी क्षेत्र में मिताक्षरा तथा वीर मित्रोदय को प्रामाणिकता प्राप्त है।

(6) बंगाल शाखा (Bangal School) -इस शाखा को 'गौड़ीय शाखा' भी कहा जाता है, क्योंकि इस भू-भाग का प्राचीन नाम गौड़ देश है। इसका एक तीसरा नाम 'दायभाग शाखा' भी है,

Disclaimer: Although all Prevention Measures are being used While making these notes but students are advise, they can consult from subject book.

PGS National College Of Law

हिन्दू विधि

क्योंकि इस शाखा का सर्वोपरि प्रामाणिक ग्रन्थ जीमूतवाहन रचित 'दायभाग' है। इस शाखा के अन्तर्गत पश्चिमी बंगाल, और असम प्रान्त का कुछ भाग आता है। 'दायभाग' इस क्षेत्र का सर्वोपरि प्रामाणिक ग्रन्थ है इसके अतिरिक्त रघुनन्दन रचित 'दायतत्व' और श्रीकृष्ण तर्कालंकार लिखित "दायकर्म संग्रह " भी प्रामाणिक ग्रन्थ हैं। वस्तुत: ये दोनों ग्रन्थ दायभाग का ही अनुसरण करते हैं और उसमें दी गई बातों की ही व्याख्या अथवा विलेषण करते हैं। इस प्रकार ये 'दायभाग' के अनुपूरक हैं। जैसा कि नाम से स्पष्ट है, "दायभाग में केवल दाय और बंटवारा सम्बन्धी प्रकरण ही हैं। मिताक्षरा की भाँति दायभाग विधि के समस्त प्रकरणों को सन्निहित नहीं करता। 'दायभाग' में जो प्रकरण दिये गये हैं उन पर यह बंगाल शाखा का सर्वोपरि प्रामाणिक ग्रन्थ है किन्तु जिन बातों के सम्बन्ध में इसमें नियम नहीं हैं उसके लिये 'मिताक्षरा' और 'वीर मित्रोदय' को देखा जा सकता है। किन्तु यह केवल उन्हीं बातों के सम्बन्ध में है जहां दोनों शाखाओं में मूलत: कोई मतभेद नहीं है। जिन बातों के सम्बन्ध में दोनों शाखाओं में मूलत: मतभेद है, जैसे दाय के प्रश्नों पर, उन पर दायभाग में कोई नियम न होने पर भी मिताक्षरा के नियमों को नहीं माना जा सकता।

हिन्दू विधि की शाखाओं का उनके प्रामाणिक ग्रन्थों तथा ग्रन्थों के लेखकों के साथ संक्षिप्त विवरण, निम्नलिखित है-

विधि की शाखाओं के सम्बन्ध में दो उपधारणायें (Presumptions) की जाती हैं। वे निम्नलिखित हैं--

PGS National College Of Law

Disclaimer: Although all Prevention Measures are being used While making these notes but students are advise, they can consult from subject book.

हिन्दू विधि

(1) जो व्यक्ति जिस शाखा द्वारा शासित होने वाले प्रदेश में रहता है, वह उस शाखा की विधि से शासित होता है।

(2) किसी व्यक्ति के अपना स्थान छोड़कर दूसरे स्थान पर जाने से वह जिस शाखा की विधि से अपने पहले स्थान पर शासित होता था उसे भी अपने साथ ले जाता है। इसका तात्पर्य यह है कि जब कोई व्यक्ति विधि की एक शाखा द्वारा शासित होने वाले प्रदेश से दूसरी शाखा द्वारा शासित होने वाले प्रदेश में जाता है तो भी वह उसी विधि से शासित होता है जिससे वह पहले स्थान पर शासित होता था।

हिन्दू विधि की इन शाखाओं का भूतकाल में जो भी महत्व रहा हो, आधुनिक काल में इनका महत्व बहुत कम हो गया है। अभी हाल में हिन्दू विधि में जो अधिनियमन हुआ है उसमें शाखाओं के भेद को प्राय: समाप्त कर दिया गया है, और विधि में एकरूपता ले आने का प्रयत्न किया गया है। इस प्रकार अब शाखाओं का महत्व और उनके आधार पर विधि में अन्तर नाममात्र को रह गया है। आशा की जाती है कि भविष्य में शाखायें पूर्णतया समाप्त हो जायेंगी, और सारे हिन्दुओं के लिये एकरूप विधि होगी। ऐसी स्थिति में ये । शाखायें एक ऐतिहासिक महत्व की वस्तु ही रह जायेंगी ।

PGS National College Of Law

Disclaimer: Although all Prevention Measures are being used While making these notes but students are advise, they can consult from subject book.

हिन्दू विधि

प्र०-3 हिन्दू विधि के विभिन्ने स्त्रोतों की विवेचना कीजिये!

हिन्दू विधि के स्रोतों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है : प्राचीन स्रोत निम्नलिखित हैं -

1. वेद,

2. स्मृतियाँ,

3. भाष्य एवं निबन्ध,

4. रूढ़ियाँ,

5, अन्य स्रोत।

आधुनिक स्रोत निम्नलिखित हैं

1. अधिनियम,

2. न्यायिक निर्णय,

3. न्याय, साम्या और सद्विवेक।

हिन्दू विधि में प्राचीन एवं नवीन दोनों प्रकार के स्रोतों से आये नियमों का समावेश होने से, और, दूसरे, हिन्दू विधि के ऐतिहासिक ज्ञान के लिये भी इन सभी स्रोतों का विवेचन आवश्यक है।

PGS National College Of Law

Disclaimer: Although all Prevention Measures are being used While making these notes but students are advise, they can consult from subject book.

हिन्दू विधि

प्राचीन स्त्रोत

ऊपर कहा जा चुका है कि प्राचीन धारणा के अनुसार विधि धर्म का एक अंग है।"धर्म" अर्थात् मान्य आचरण के स्त्रोत, विधि के भी स्रोत हैं। मनु के अनुसार, "वेद, स्मृति, सदाचार और जो अपने को तुष्टिकर हो, ये चार धर्म के साक्षात् लक्षण हैं। मनु द्वारा दिये गये इन स्रोतों में से सदाचार का विवेचन रूढियों के विवेचन के अन्तर्गत किया जाएगा। जहाँ अपने को तुष्टिकर बात के विधि के एक स्रोत होने का प्रश्न है, यह कोई महत्वपूर्ण स्रोत नहीं है। अपने को तुष्टिकर होने से यह तात्पर्य नहीं कि जिसकी जो इच्छा हो वह वैसा आचरण करने को स्वतन्त्र है। शेष स्त्रोतों पर यहाँ प्रकाश डाला जायेगा।

1. वेद

वेद विश्व के आदि ग्रन्थ हैं। इनका नाम श्रुति भी है। श्रुति का अर्थ होता है जो सना गया के बारे में यह धारणा है कि ये ईश्वर द्वारा ऋषियों पर प्रकट किये गये थे। इनमें उनके मुख सें निकले हुये साधात रूप से अंकित हैं। इसलिये उन शब्दों के उच्चारण तथा पाठ की महत्व है, और ये सर्वथा दोप परण हैं। वेद चार हैं-ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद । इनके साथ वेदांग और उपनिषट भी है।

2. स्मृतियाँ

"स्मृति" का शाब्दिक अर्थ होता है जो स्मरण रखा गया हो। यह माना जाता है कि स्मृतियाँ वेदों के लग पाठों पर आधारित हैं। **जैमिनी का मत** है कि स्मृतियाँ उन्हीं ऋषियों द्वारा संकलित की गई है जिन पर कर प्रकट हुये थे। इसलिये अनुमान किया जाता है

Disclaimer: Although all Prevention Measures are being used While making these notes but students are advise, they can consult from subject book.

PGS National College Of Law

हिन्दू विधि

कि वे श्रुतियों पर आधारित हैं, और उन्हें प्रामाणिक माना जाना चाहिये। इस प्रकार स्मृतियाँ ऋषियों द्वारा स्मरण रखे गये वेदों के पाठों के आशय को अन्तर्विष्ट करती हैं। अतएव, ये भी ईश्वर प्रदत्त हैं किन्तु ये उसके वास्तविक शब्दों में नहीं हैं। व्यावहारिक रूप में विधि जिस अर्थ में हम आज उसे समझते हैं, अर्थात् विधिज्ञ की विधि, उसकी प्रथम और मूल स्त्रोत स्मृतियाँ ही है।

स्मृतियों को दो भागों में विभाजित किया जाता है-धर्मसूत्र और धर्मशास्त्र।

धर्मसूत्र- धर्म सूत्रों में अर्थात् गद्य में हैं सूत्र पद्धति वेदों के अध्यापन के लिये आविष्कृत की गई थी. और इसका प्रयोजन पाठ को स्मरण रखने में सरलता के लिये था। जब अनुष्ठानों तथा नित्य की जावन विषयक बातों तक को सूत्रों में रखा गया तो विधि के नियमों का सत्रों में प्रस्तुत किया जाना स्वाभाविक था । सूत्रों में प्रस्तुत किये गए विधि के नियम धर्मसूत्र कहलाये।

धर्मशास्त्र- धर्मशास्त्र धर्मसूत्रों के पश्चात् लिखे गये हैं। ये छन्दबद्ध हैं तथा इनमें "विधि के नियम" अधिक क्रमबद्धता तथा सम्पूर्णता के साथ दिये गये हैं। मुख्य धर्मशास्त्रकार मनु, याज्ञवल्क्य, नारद, वृहस्पति और कात्यायन हैं जिनके बारे में नीचे संक्षेप में विवेचन किया जायेगा, इनके अतिरिक्त भारद्वाज अंगिरा, अत्रि, हारीत, उसना, शाकल्य, शौनक, पराशर, व्यास, यम, देवल इत्यादि धर्मशास्त्रकारों के भी पाठ भाष्यों एवं निबन्धों में उद्धृत मिलते हैं।

मनु-स्मृतिकारों में मनु का स्थान सर्वोपरि है । वृहस्पति कहते हैं कि स्मृतिकारों में मनु का स्थान सर्वप्रथम है क्योंकि उन्होंने अपनी स्मृति में वेदों के समग्र भाव को अभिव्यक्त किया है, और जो स्मृति उसके विरोध में आती है वह प्रामाणिक नहीं है मनुस्मृति का विश्व की प्राचीन संहिताओं में महत्वपूर्ण स्थान है। विधि के इतिहास के प्रारम्भ काल में

PGS National College Of Law

Disclaimer: Although all Prevention Measures are being used While making these notes but students are advise, they can consult from subject book.

हिन्दू विधि

इस प्रकार की व्यवस्थित और विस्तृत और सर्वांगीण संहिता के प्रणयन का कार्य सचमुच ही स्तुत्य हैं।

भाष्य और निबन्ध

(Commentaries and Digests)

मनु ने विधि के मुख्य दो स्रोतों, वेद और स्मृति का ही उल्लेख किया है। मनु के पश्चात् हिन्दू विधि अन्य अनेक स्रोतों द्वारा विकसित हुई। इन स्रोतों में भाष्यों एवं निबन्धों का सबसे महत्वपूर्ण स्थान है। स्मृतियाँ विधि की मूल प्रमाण-ग्रन्थ हैं। उनमें दिये गये नियम किन्हीं अन्य नियमों द्वारा निरसित नहीं किये जा सकते। किन्तु स्मृतियों के पाठों का निर्वचन अथवा भाष्य किया जा सकता था, और वे अपने इस अर्थ में ही लागू हो सकते थे। भाष्यों एवं निबन्धों द्वारा यही काम किया गया है। भाग्य वे हैं जिनमें किसी स्मृति विशेष की टीका की गई है। निबन्ध वे हैं जिनमें किसी प्रकरण विशेष पर अनेक स्मृतियों के पाठों को उद्धृत कर उस सम्बन्ध में विधि को स्पष्ट किया गया है। वस्तुतः अर्थ निकालने में भाष्यकारों और निबन्धकारों ने विधि का नवनिर्माण कर दिया है। इन्होंने स्मृतियों के पाठकों को इस प्रकार का अर्थ दिया कि वे तत्कालीन आवश्यकताओं के अनुरूप बन सकें । यह कार्य उन्होंने इतनी दक्षता के साथ किया कि भाष्य स्मृतियों के ऊपर आ गये। इस प्रकार भाष्य विधि के एक स्रोत बन गये स्मृतियों के जिन अंशों का निर्वचन किया गया है उस स्थल के लिये वह निर्वचन ही प्रामाणिक है । इस सम्बन्ध में मूल पर विचार नहीं किया जा सकता।

रूढ़ियाँ(Customs)

ऊपर मनु के उस पाठ को उद्धृत किया जा चुका है जिसके अनुसार सदाचार धर्म का और इसलिये विधि का स्रोत है। सदाचार से तात्पर्य समाज में मान्य आचरण से है, दूसरे शब्दों में, रूढ़ियों से है। बहुत प्रारम्भ काल से ही हिन्दू विधि में रूढ़ियों को विधि का एक

Disclaimer: Although all Prevention Measures are being used While making these notes but students are advise, they can consult from subject book.

PGS National College Of Law

हिन्दू विधि

महत्वपूर्ण स्त्रोत माना गया है, और इन्हें अप्राप्त पाठों पर आधारित माना गया है। पाठों पर आधारित होने से इनकी प्रामाणिकता पाठ के समान होने के साथ ही हिन्दू विधि का यह सिद्धान्त कि 'विधि ईश्वर निर्मित है, मनुष्य निर्मित नहीं ', अक्षुण्ण रहता है। रूढ़ियों ने हिन्दू विधि के विकास में अतिशय महतवपूर्ण भूमिका अदा की है । स्मृतियों में मतभेद, भाष्यों, एवं निबन्धों का एक ही पाठ को भिन्न-भिन्न अर्थ देना इत्यादि बातें रूढ़ियों को स्थान देने और मान्यता देने के लिये ही हुई। इसीलिये स्मृतिकारों तथा भाष्यकारों एवं निबन्धकारों ने एक स्वर से रूढ़ियों के महत्व को और उनको मान्यता देने की बात का समर्थन किया है। इस प्रकार के कुछ मतों को यहां उद्धृत करना अप्रासंगिक नहीं होगा।

मनु के उस शास्त्र पाठ को जिसमें उन्होंने सदाचार को धर्म का लक्षण माना है, पीछे उद्धृत किया जा चुका है। इस सम्बन्ध में मनु के कुछ और पाठ इस प्रकार हैं

येनास्य पितरो याता येन याता पितामहाः।

तेन यायात्सतां मार्ग तेन गच्छन्न रिष्यते।॥

(जिस मार्ग से उसके पिता और पितामह चले हैं उन्हीं सज्जनों मार्ग से चले। ऐसा करने से मनुष्य को कष्ट नहीं प्राप्त होता।)

प्रत्यहं देशदृष्टैश्च शस्त्रदृष्टैश्च हेतुभिः

अष्टादशसु मार्गेषु निबद्धानि पृथक्पृथक् ॥813॥

PGS National College Of Law

Disclaimer: Although all Prevention Measures are being used While making these notes but students are advise, they can consult from subject book.

हिन्दू विधि

(राजा का यह कर्तव्य होता है कि वह अपने सम्मुख आये हुये व्यवहार के अठारह मार्गों के अन्तर्गत आने वाले वादों को स्थानीय प्रथाओं तथा धर्मशास्त्रों से प्राप्त सिद्धान्तों के आधार पर निर्णीत करें।)

आधुनिक स्रोत

ऊपर हिन्दू विधि के जिन स्रोतों का उल्लेख किया जा चुका है उनके अतिरिक्त आधुनिक युग में हिन्दू विधि के कुछ नवीन स्रोत भी अस्तित्व में आये हैं। ऐसे स्रोतों का अस्तित्व भारत में अंग्रेजी राज्य की स्थापना के पश्चात् हुआ है। आधुनिक युग में किसी देश में विधि निर्मित अथवा परिवर्तित करने का अधिकार यहाँ के सम्प्रभु (Sovereign) को होता है न कि वैयक्तिक रूप से किसी मनुष्य को। यहाँ अंग्रेजी शासन की स्थापना के पश्चात् भाष्यकारों एवं निबन्धकारों का अपने ढंग से विधि निर्माण करने का अधिकार समाप्त हो गया।

अधिनियम

देश में अंग्रेजी शासन की स्थापना के पश्चात् हिन्दू विधि के बारे में अधिनियम पारित होना प्रारम्भ हो गये और उत्तरोत्तर उनकी संख्या बढ़ती हुई। देश में राष्ट्रीय सरकार की स्थापना के पश्चात् यह कार्य योजनाबद्ध रूप से हुआ है जो कि बदली हुई सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों में आवश्यक था जिन अधिनियमों द्वारा हिन्दू विधि में संशोधन, परिवर्द्धन, सम्वर्द्धन एवं निरसन हुआ है वे निम्नलिखित हैं

(1) कास्ट डिसएबिलिटीज रिमूवल ऐक्ट (जाति-निर्योग्यता निवारण अधिनियम), 1850- कोई हिन्दू जाति से बहिष्कृत होने अथवा धर्म परिवर्तन करने पर अपने हिन्दू परिवार में दाय प्राप्त करने के अधिकार से वंचित हो जाता था। इस अधिनियम ने इस बात को

Disclaimer: Although all Prevention Measures are being used While making these notes but students are advise, they can consult from subject book.

PGS National College Of Law

हिन्दू विधि

समाप्त कर दिया। जाति से बहिष्कृत होने अथवा धर्म-परिवर्तन करने के कारण कोई हिन्दू दाय प्राप्त करने के अधिकार से वंचित नहीं हो सकता था।

(2) हिन्दू विडोज रिमैरेज ऐक्ट (हिन्दू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम), 1856 - इस अधिनियम ने हिन्दू विधवा पुनर्विवाह को और उस विवाह से उत्पन्न संतान को वैधता प्रदान की।

(3) **हिन्दू विल्स रिमैरेज एक्ट (हिन्दू वसीयत अधिनियम),1870-** इस अधिनियम के द्वारा हिन्दुओ के वसीयत करने के संबंद में नियमो का विधान किया गया वस्तुतः इस अधिनियम ने इंडियन सक्सेसन एक्ट (भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम), 1865 के वसीयत सम्बन्धी उपबंध पर भी लागु कर दिया।

(4) **इंडियन मेजारिटी एक्ट (भारतीय वयस्कता अधिनियम), 1875** इस अधिनियम द्वारा भारत में विवाह , विवाह -विच्छेद , दस्तक इत्यादि को छोड़कर वयस्कता की आयु 18 वर्ष नियत की गयी।

(12) चाइल्ड मैरेज रीस्ट्रेन्ट ऐक्ट (बाल- विवाह अवरोध अधिनियम), 1929 - इस अधिनियम ने विवाह के लिये बालिका और बालक की निम्नतम आयु क्रमश: 14 वर्ष (जो बाद में अधिनियम का संशोधन करके 18 वर्ष कर दी गयी) और 18 वर्ष (जो बाद में 22 वर्ष कर दी गई) निर्धारित किया।

आर्य मैरेजेज वैलिडेशन ऐक्ट (आर्य विवाह विधिमान्यकरण अधिनियम) 1937 (1940 में यथा संशोधित)- यह अधिनियम आर्य समाजियों के बीच, चाहे वे किसी जाति, उपजाति अथवा धर्म के हों, हुये विवाहों को, चाहे वे अधिनियम के पारित होने के पूर्व हुये हों अथवा पश्चात्, विधिमान्य बना देता है।

Disclaimer: Although all Prevention Measures are being used While making these notes but students are advise, they can consult from subject book.

PGS National College Of Law

हिन्दू विधि

न्यायिक निर्णय

(Judicial decisions)

न्यायिक निर्णय भी विधि के एक स्रोत हैं। न्यायाधीश विधि के नियमों का निर्वचन और व्याख्या करने में एक सृजनात्मक (creative) कार्य करता है । वह विधि के नियम को व्यावहारिक स्वरूप प्रदान करता है। इस कार्य को करने में न्यायाधीश कभी-कभी विधि में परिबर्तन ला देता है। इसीलिये कहा जाता है कि न्यायाधीश भी विधि का निर्माण करता है। जहाँ पर न्यायालयों के निर्णय स्वयं पर अथवा अपने नीचे के न्यायालयों पर आबद्धकर होते हैं (भारत में भी ऊँचे या बड़े न्यायालयों के निर्णय नीचे के न्यायालयों पर आबद्धकर होते हैं) वहाँ यदि किसी बात के सम्बन्ध में कोई निर्णय दिया जाता है तो उस बात के सम्बन्ध में वह प्रामाणिक हो जाता है, और अगर उस बात से सम्बन्धित कोई वाद पीछे खडा होता है तो उस निर्णय के आधार पर निर्णय दिया जाता है। न्यायिक निर्णय इसी रूप में हिन्दू विधि का एक स्रोत है। हिन्दू विधि का यह स्त्रोत भी भारत में अंग्रेजी शासन की स्थापना के पश्चात् ही अस्तितव में आया हैं। उन्नीसवी शताब्दी में प्रिवी कौंसिल भारत का सर्वोच्च न्यायालय हो गयी। उसके नीचे हाईकोर्ट अथवा चीफ कोर्ट थे स्वीय विधि के वाद भी इन न्यायालयों की अधिकारिता में थे। प्रिवी कौंसिल द्वारा दिये गये निर्णय सारे देश के न्यायालयों पर और हाई कोर्ट तथा चीफ कोर्टों द्वारा दिये गये निर्णय उनके अधिकारिता क्षेत्र में आने वाले नीचे के न्यायालयों पर आबद्धकर थे। देश के स्वतन्त्र होने के पश्चात् उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों के निर्णयों की भी क्रमशः यही प्रामाणिकता है। प्राचीन हिन्दू विधि जैसा कि वह 19 वीं और 20 वीं शताब्दी (नये अधिनियमों के पारित होने के पूर्व) में रही है, के ज्ञान के लिये प्रिवी कौंसिल तथा हाईकोर्टों के निर्णयों का अध्ययन अपेक्षित है। वह विधि इण्डियन अपील्स', 'इण्डियन

PGS National College Of Law

Disclaimer: Although all Prevention Measures are being used While making these notes but students are advise, they can consult from subject book.

डिसीसन्स' और 'आई एल० आर०' इत्यादि प्रतिवेदनों में ही प्राप्य है। इस प्रकार न्यायिक निर्णय हिन्दू विधि का एक महत्वपूर्ण स्रोत हैं।

3. न्याय, साम्या एवं सद्विवेक

(Justice, Equity and Good faith)

न्याय, साम्या और सद्विवेक को भी कहीं-कहीं हिन्दू विधि का एक स्रोत माना गया है। वस्तुत: यह शब्दावली हिन्दू विधि की अपनी नहीं है अंग्रेज न्यायाधीशों द्वारा हिन्दू विधि में घुसेड़ी गयी एक विदेशी संकल्पना है। इंग्लैण्ड की विधि, जैसा हम जानते हैं कॉमन लॉ (Common law) कहलाती है। कॉमन लॉ रूढ़ियों से विकसित हुई है। रूढ़ियाँ न्यायिक निर्णयों में सन्निहित होकर कॉमन लॉ का निर्माण करती हैं। विधि का ऐसा स्वरूप होने के कारण इंग्लैण्ड में यह स्वाभाविक ही था कि अनेक नवीन समस्याओं के न्यायालयों के सामने उत्पन्न होने पर उसके लिये कोई पूर्व अवधारित नियम नहीं प्राप्त हो सकते थे इसलिये वहाँ न्याय, साम्या एवं सद्विवेक की संकल्पना अस्तित्व में आई । इसका तात्पर्य यह था कि ऐसी समस्याओं के आने पर जिसके लिये पहले से कोई निश्चित नियम न हो न्यायाधीश जो उसे न्यायगत, साम्यिक और विवेकपूर्ण प्रतीत हो वैसा निर्णय दे। इस बात को अंग्रेजी न्यायाधीशों ने हिन्दू विधि में भी लागू किया। जिस बात के सम्बन्ध में धर्मशास्त्रों में कोई उपबन्ध नहीं होता था, अथवा जहां स्मृतियों में दिये गये पाठ परस्पर विरोधी होते वहाँ वे हिन्दू विधि के सामान्य आधार का ध्यान रखते हुये जो न्यायगत, साम्यिक तथा विवेकपूर्ण प्रतीत होता था वैसा निर्णय देते थे।

PGS National College Of Law

Disclaimer: Although all Prevention Measures are being used While making these notes but students are advise, they can consult from subject book.